डायरी में तेईस अक्तूबर

लाल्टू

रामकृष्ण प्रकाशन
विदिशा (म.प्र.)

फ्लैप से...

लाल्टू की कविताएँ बार-बार पढ़ते हुए अनायास ही ब्रेख़्त की मशहूर पंक्तियाँ याद आ जाती हैं -

बुरे वक़्त में क्या गीत भी गाए जाएँगे

हाँ ! बुरे वक़्त में
बुरे वक़्त के बारे में
गीत गाए जाएँगे

'डायरी में तेईस अक्तूबर' कविताओं से रू-ब-रू होते हुए एक ऐसे कवि से मेरा साक्षात्कार होता है जो सत्ता और व्यवस्था की चौंध से दूर लगभग जैसे अज्ञातवास में डूबा इस बुरे वक़्त को रेखांकित कर रहा है। लगभग दो दशक पहले लाल्टू की कविताओं का जो प्रभाव मानस पर था वह लगभग आज भी अक्षुण्ण है। क्योंकि कवि कर्म की सबसे बुनियादी और प्रामाणिक कसौटी वह निभा रहा है और वह है प्रतिबद्ध राजनैतिक 'विज़न'। जहाँ जीवन, कर्म और कविता दोनों ही एक-दूसरे के पर्याय हैं।

यह अकारण नहीं है कि लाल्टू अपनी कविताओं में लगभग 'लामबद्ध' हैं। अपनी प्रेम कविताओं में भी वे घोर राजनैतिक होते हैं। आज जबकि भू-मण्डलीकरण और वैश्वीकरण के नाम पर साम्राज्यवादी-फासीवादी ताकतें अपना शिकंजा कसती जा रही हैं और कलावाद नित्य नए रूप में अपना दुष्चक्र रच रहा है, लाल्टू जैसे 'एक्टिविस्ट' कवि लगभग दुर्लभ प्रजाति में त्बदील होते जा रहे हैं, लाल्टू की कविताएँ हमसे खुलकर मुठभेड़ करती हैं। वे बाज़वक़्त हमें अपनी सही चेहरा भी दिखलाती हैं और अस्सी के दशक में आए कविता के युगान्तकारी प्रभाव को शिद्दत के साथ सामने रखती है।

एक ऐसी कविता जहाँ विचार, अनुभव, कल्पना और अतियथार्थवाद का अद्‌भुत सम्मिलन है, इसमें हम लाल्टू को आर-पार और सरापा देख सकते हैं। हमें लगता है कि लाल्टू का काम एक दुर्लभ अनुभव की तरह हमारे साथ जी रहा है। आख़िरकार प्रतिबद्ध और पारदर्शी कविता के लिए बहुत कम कोना बच रहा है। ठीक वहीं से लाल्टू हमें पुकारते हैं। वहाँ जहाँ डायरी में स्पन्दित हो रहा है - तेईस अक्तूबर।

- नरेन्द्र जैन

डायरी में तेईस अक्तूबर

डायरी में तेईस अक्तूबर

उस दिन जन्म हुआ औरंगज़ेब का,
लेनिन ने सशस्त्र संघर्ष का प्रस्ताव रखा उस दिन।
उस दिन किया जंग का ऐलान बर्त्तानिया के ख़िलाफ़ आज़ाद हिंद सरकार ने।

उस दिन हम लोग सोच रहे थे अपने विभाजित व्यक्तित्वों के बारे में
रोटी और सपनों की गड़बड़ के बारे में
बहस छिड़ी थी विकास पर
भविष्य की आस पर

सूरज डूबने पर गाए गीत हमने हाथों में हाथ रख।
बात चली उस दिन देर रात तक। जमा हो रहा था धीरे-धीरे बहुत-सा प्यार।
पूर्णिमा को बीते हो चुके थे पाँच दिन।

चाँद का मुँह देख़ते ही हवा बह चली थी अचानक।
गहरी उस रात पहली बार स्तब्ध खड़े थे हम।
डायरी में, 23 अक्तूबर का अवसान हुआ बस यहीं पर।

1994
हंस - 1996

पुनश्च

हाँ, नेपाल में जीते हैं कम्युनिस्ट
जब डिकिंस बना था न्यूयॉर्क का पहला काला मेयर, हम लोगों ने हरदा में बैठकर गीत गाए थे। आज तुम तक जब यह ख़त पहुँचेगा, काठमांडो में आसमान लाल होगा। ऐसे झूम रही होगी हवा जैसे अड़सठ में कलकत्ता।

(डिकिंस भी गया। अड़सठ की हवा में पुराने तालाब के दलदल-सी कैसी गंध आ गई। हम हो गए दूर चढ़ गए बसों पर जाने कितने लोग। कहते हैं इतिहास बदल गया। सुखराज जाली पासपोर्ट लेकर आईसक्रीम बेचता है अमरीका में, वहीं-कहीं

चोली के पीछे है माइकल जैक्सन।

बहरहाल तुम आओगी तो बैठेंगे, हालाँकि अब बढ़ चुका है बेसुरापन। बस पर चढ़ने से बची कविता होगी। हो सकता है नेपाल के पहाड़ लाल

सूरज जैसे तमतमाते रहें, सच तो यह कि अड़सठ ज़िंदा है हमारे बेसुरे गीतों में)।

1994
समय चेतना - 1996

नाराज़ लड़की का ख़त पढ़कर

जाने कौन-सा हाथ था जिसकी उँगली छुई थी
छुअन बन गई थी शब्द
अनकहे शब्दों के बारे में शब्द

बच्ची ने ड्रागन से पूछा कहाँ से लाया वह आग
लिखा था नेहरू को आनंदी दुबे ने क्यों कटा नाम
फीस न देने पर
आंइस्टाइन ने पूछा जुआ क्योंकर खेले खुदा
कोशिश कर रहा बहुत देर से लिखने की कैसे लौटाऊँ
छुअन जो रह गई गाड़ी छूटते वक़्त मेरे पास

शब्दों से पिघला था उसका मन
जाना था कितनी व्यथित है वह
फिर ख़त थे थीं कविताएँ औरत का बयान
अवेहलित दिन रात
जीवन का प्रतीक बना उँगलियों का छूना
पिछले नए साल पर आया कार्ड नाराज़गी का सादापन
अब तक नाराज़

हे गति के अखिल नियम!
आकाश से मैंने की जो प्रार्थनाएँ
उस लड़की की उँगलियों तक पहुँचा देना
कहना गरल पी लूँगा जीवन बन
आकाश से देखूँगा फिर भी उसे

1990

समय चेतना - 1996, आजकल - 1996, उत्तर संवाद - 1995

पहाड़

लौटने से एक दिन पहले
सूरज आने के ठीक बाद
उसे ध्यान से देखा
उसके सीने पर इकट्ठी हो रही थीं चिड़ियाँ
किसी ने लगा दी थी आग एक ओर
और चिड़ियों को सोचना था उसके बारे में

अभी थोड़ी देर पहले उठे लोग
उसकी पसलियों से निकलती सड़क पर
हैंड पंप से पानी भरने लगे थे

नीचे शिविर में युवाओं का दल
निकला रेंग-रेंग कर उसका चमड़ा परखने के लिए
दरअसल वह सूखा, नंगा जिस्म था
बहुत पहले एक तहखाने से भागा
आज तक असमंजस में
कि जाऊँ आगे या पीछे

उसकी ठंडक उसकी उलझन ही थी
उम्र से या लोगों के बार-बार उखाड़ने से
झड़ते जा रहे थे रोएँ के बाल

आसान था यह भूलना कि
वह अभी ज़िंदा है
और चले जाना उसे देखकर फिर एक बार

मई - 1996

इतवारी पत्रिका - 1997

एकाकी

1
सुबह वही जो पिछली सुबह
था अकेला कमरा
फिर दिन भर की किताबों से मिलने को बेचैन

2
किसको समझाएँ
सूक्ष्म भी है स्थूल भी
पर कहते हुए कहना है जैसे व्यापक, विशाल
किसी को नहीं कह सकते
अकेलेपन की सतह किस धरातल से
शुरू होती है
अंधकार की छवि बनाते हैं
चौंधियाते प्रकाश में
किसको समझाएँ?

3
ऐसे सिमटता है आदमी
धीरे-धीरे जाते हैं दोस्त-बाग़
सभाएँ-महफ़िलें
लोग कहते हैं वह सक्रिय नहीं रहा
आदमी ढूँढ़ता है

दीवार पर खूँटे
दरवाज़े पर सीढ़ियाँ
कमरे में कुर्सी
और अँधेरे में नींद

4
उड़ती चिड़िया के पंख में काँटा-सा कुछ चुभता है
और वह आत्मघाती ख़्यालों में गोते लगाती है
उस वक़्त उसे आसमान में कोई बाज़ नहीं दिख़ता
सिर्फ दर्द का एक समंदर होता है आँखों के आगे

अगस्त - 1995
इतवारी पत्रिका - 1997

शीशा छोटा है

शीशा छोटा है
विवस्त्र शरीर
फैले शीशे से बाहर

प्रकाश की किरणों में
उनके रोएँ प्रदीप्त हैं
अपने होने के अहंकार में

शीशा नहीं
पोखर कोई
छलकता प्यार जिसमें

आदम और हव्वा होना मुमकिन है
उन दोनों का
प्रधानमंत्री और उनकी पत्नी होना भी
सोचना कठिन है पर हो सकते हैं
वे हिटलर और उसकी प्रेमिका भी

इसी समय वे बिल्कुल वे हैं
उनके सपनों में है पसीने की महक
मिट्‌टी पर लोटने की चाह
रेंगती उँगलियाँ

1993
पहल - 1995

आधुनिक

बेटी छह साल की हो गई है
मकान के लिए कर्ज़ की किश्तें
और आठ साल साथ रहने की बोरियत का घड़ा
भर रहे हैं साथ-साथ

चार बजे लौटने का कहकर आधी रात बाद लौटा है मर्द
औरत झगड़ती है जैसे झगड़ना चाहिए उसे
उसकी धमकियों में हैं
उसकी और बेटी की लाशें
बच्ची खुली आँखों से देख़ती है मच्छरदानी के छेद
उसका पहला पाठ इन्हीं छेदों का है जो उसे अपनी सुबहों में
शामों में दिखने लगे हैं
अगले चार सालों में वह जानेगी
अपने माता-पिता के करीब होने का रहस्य
सोफा, टेलीविज़न, डाइनिंग टेबल, फ्रिज़
के साथ ही जीवन में होंगे माँ-बाप
ऊबते-ऊबते एक दिन सोचेगी
खिड़की से छलांग लगाने की ख़ौफनाक बात
पर सुनो! दस की उम्र होते ही अचानक
आ बैठेगा उसके मन में घोड़ों वाला राजकुमार

लंबे समय तक यही होगा उसके जीवन का आधार।

1994
हंस, पहल - 1996

ग्रामसभा

सूरज, बादल और पेड़ की टहनी शामिल थे हमारे षड्यंत्र में
हम बाँध रहे अपनी समझ आँकड़ों के मंत्र में
चार्ट टँगे थे एक ओर
किसानों ने पूछे थे सवाल
बहस छिड़ी थी ज़ोर

दूसरी ओर थे वे हमारे सुंदर होने का साक्षात् प्रमाण।
सूरज, बादल और पेड़ की टहनी
ढलती शाम हमारे साथ

हमने उन्हें ऐसे देखा जैसे देख़ते हैं पानी
नहीं सोचा उनका हमारे साथ होना
जल है प्राण ऐसा कब सोचते हैं हम

सिर्फ़ वे ही जान पाँएगे जो छिपे गाड़ियों में
सिपाहियों की बंदूकों के नीचे
उच्चता का दर्प नहीं रोक सकता उनके दिलों में हाहाकार
सूरज, बादल और टहनी के न होने का

1994
समय चेतना - 1996

डी एन ए एक सुंदर कविता है

भूख कविता प्यार
अकेला होना भीड़ में
ऐसी बातें हैं कुछ

मैं कहना चाहता हूँ
एक सुंदर कविता है डी एन ए
इन दिनों शरत् अपनी आँखों से
जिस्मानी अहसासों से
मन से दिमाग़ में
भोग रहे हैं हम
डी एन ए वह कविता है
जिसके छंदों में हैं वही
शरत्, जिस्मानी अहसास, आँखें

वैसे डी एन ए है
पुराने मकानों का चक्कर काटती
सीढ़ियों का जोड़ा
छंद बँधे
सीढ़ियों के बीच
कहने को
एक अणु है
अणु होते हैं बहुत छोटे

बहुत-बहुत-बहुत छोटे
यकीन कीजिए
इन्हीं सीढ़ियों में
आप हैं
सेठ का मोटापा
प्रधानमंत्री का गंजा सिर
या कवि की संवेदना

इन्हीं सीढ़ियों में
वह सुंदर
जो मिला
आदम हव्वा से
माँ-बाप की आदिम चीत्कारों में
डी एन ए कविता है वह
जो दो शरीरों को माँ और बाप बनाती है

ऐसा भी होता है
डी एन ए ने बनाया
एक बहुत सुंदर चेहरा
पर मोटे सेठों
नेता के चमचों
न रखा उसे भूखा

भूख
सभी कविताएँ खा जाती है

इसलिए
सड़क किनारे
वह

जिसकी तस्वीर लुई माल ने
कलकत्ता में खींची थी
ऐसी कविता है
जिसे यक्ष्मा हो
और जिसमें डी एन ए विदेशी जटिल लफ़्ज हो

बस ऐसी ही कुछ बातें हैं
तस्वीरों की
विज्ञान की

1992
पल-प्रतिपल -1992

बूँदें

बारिश में भीगते हुए वह उनको पकड़ने की कोशिश करता। वे उसकी आँखों पर आतीं और उसके हाथ उनको छूते। उस वक़्त दुनिया में सिर्फ वे होतीं। उस वक़्त आकाश नहीं पेड़ नहीं पक्षी नहीं। उस वक़्त इंसान नहीं उस वक़्त कपड़े नहीं उस वक़्त खाना नहीं पानी नहीं। वे आतीं बाढ़-बाढ़।

जब वे उसके शरीर को फिसलन कहकर गुज़र जातीं तब वह खुद को देख़ता। खुद पर उगे उन घावों को। नज़रें उठाते ही उसे लगता वे वे नहीं। वे उन घावों से उठते फव्वारों की छींटें थीं। तब वह रो पड़ता। तब वह चारों ओर पढ़ता उदासी। तब वह सुनता ख़बरें जिनमें होतीं हत्याएँ। ख़बरों में चीखें औरतों की। ख़बरें उसके निरंतर न होने की, न होते रहने की।

वे, उसके आँसू और अकाल वेला में जैसे दया से छिड़की ओस। इसलिए बारिश होते ही वह दोस्तों से कहता मुझे बचपन याद आता है।

1994

वर्षांत

रह गई बहुत सारी ज़रूरी बातें
कहता रहा नहीं दे सकता समय सबको
हाँ हाँ कहकर
अंदर ही अंदर मन में न
की तहों के नीचे ढक लीं
बहुत सारी बातें

रोज़ दूसरों के बारे में
करते रहे बातचीत
काम की कोशिश तक खा गई
ज़िंदगी और खुद की कशमकश

ढका पड़ा था
अंजाने ही
मन का एक टुकड़ा
समझदारी के बोझ तले

बहुत देर लगी
जान पाने में
बहुत देर लगी

1993
विपाशा - 1993

कविता का समय

कविता को समय नहीं मिलता
चूँकि प्यार को नहीं मिलता समय
कविता ने कभी घर बनाया जाने
किस स्नायु-जाल में, तब से जैसे जगह
ढूँढ़ रहे हैं प्यार की

होगी-होगी प्यार की जगह भी कहते-कहते
कुंठित सूक्ष्म से सूक्ष्मतर जीवन में धँसती रही कविता
जब व्यवस्थाएँ बनती रहीं विशालतर

हे दफ्तर/हे पेशा/हे पेशेवर
सफलता के नित नए क्षितिज।
कल्पनातीत प्रतिष्ठित मान्यवर।
हे देश-विदेश के प्रगति-शिखर।
हे अवधारणाओं/हे आधुनिक मंज़र।

आओ इस वक़्त में आओ
इस वक़्त जब शांत है सूरज
शांत हैं पेड़-पौधे पक्षी सब

चाहिए प्यार प्यार चाहिए
इक अपना संसार चाहिए

यह वक़्त की कविता का अखिल स्वरूप
चिरंतन यह आसमान
शब्द की साँस
शब्द प्यार कविता

जुलाई- 1994

बच्ची बोलेगी

बच्ची बोलेगी माँ एक दिन
एक दिन बोलेगी बापू
बोलेगी दूध, गाड़ी, फूल

खिल रही बच्ची
बसंत की धूप में
नन्हीं-सी जान
बोलेगी धूप एक दिन

एक दिन आएगा तूफान
बच्ची बोलेगी माँ
हर कोई बोलेगा युद्ध
बच्ची बोलेगी
धूप, दूध, फूल

1991
साक्षात्कार - 1991

अँधेरा - 1

1.
देखता हूँ खिड़कियों पर उतरते तुम्हें
अकेलापन तुममें
इतना कि बार-बार लगता है
दरवाज़े के बाहर कोई खड़ा है
अचानक ही कूद पड़ेगा
हाथों में उसके होंगी
भूख से भी अधिक भयंकर
अलग-अलग किस्म की भूख की यादें

2
उनके चेहरे पर किस कदर जमा है अँधेरा
वे जो आधे इधर हैं
और आधे उस ओर।
कइयों की सच्चाइयाँ पहाड़ होती हैं
पहाड़ है सच्चाई उनकी

3
जब आवाज़ अँधेरे से न आती
वह इतिहास नहीं होती
अँधेरे में ही पसीना
गढ़े जिसने सभी राजमुकुट
सिक्के-हथियार
अँधेरे में ही भिड़ंत जिसमें
सभी सेनाओं की
हार ही हार
अँधकार में डूबना
इतिहास की पहली कविता है

4
अँधेरे में ही उल्लास
स्यापों के छंद भी
गुपचुप प्रेम
खुद को पाता हर समाज
अँधेरे में ही

सच है अँधेरा ही
अंधकार पर जड़े जो नक्षत्र हैं
टूट चुके सैंकड़ों साल पहले

सड़कों पर गुज़रते हैं जब
यदा-कदा अभिवादन करते
सब झूठ है सब झूठ है।

1995
दलित अस्मिता - 1995

अँधेरा - 2

बहुत दिन हुए कविता नहीं लिखी
बहुत सारी नींदें टूटती रहीं
कविता नहीं थी किसी अँधेरे-उजाले में

कविता नहीं लिखी
नहीं किया जाने क्या कुछ
वह लड़की जिसे मेरी बहस अच्छी नहीं लगी
उससे नहीं पूछा कि अपने दाँतों के साफ न होने को
या अपना भरोसेमंद प्यार खाते रहने को
किस शीशे में रोती है

वह हरामी जिसे मिली उम्रक़ैद
जिसने तीन साल की बच्ची का किया बलात्कार
उससे नहीं पूछा कि रहता है मेरी ही गली के आसपास
तो मुझमें कितना बसा है वह

रोमारियो से नहीं पूछा कि फालतू का
खालीपीली बोम मारता है क्यों
जब गोल ही मिस करना था

नहीं लिखी कविता
नहीं पूछा बहुत कुछ
गुज़रता रहा ज़िंदगी के उन नुक्कड़ों से
जहाँ खड़ी भीड़
हर नए गर्भपात पर अचंभित

नहीं लिखी कविता
टूटती रही नींद
जाता रहा बाथरूम
वहाँ कोई सपना न छिपा था
कविता जहाँ नहीं थी
सपनों में सिर्फ़ अँधेरा था।

शहर लौटने पर पहले-पहल ख़याल

दक्षिण के जाने किस प्रांत से आए कारीगर लेटे होते थे जहाँ
उन जगहों की शक्लें नहीं बदलीं
जैसे नहीं बदला शाम का धुँआ
मुहल्ले की कुंठाएँ नहीं बदलीं

हालाँकि दस सालों में बदलती भी है आत्मा कुछ
शून्य की ओर बढ़ता शहर लड़खड़ाता फँसा किस आवर्त्ता में
मुहल्लों से लगे पेड़
नहीं करता तापस दास बात पार्टी के बारे में
कहता रहेंगे ज़िंदा ये पेड़
पेड़ों के पास है असीम दया
शहर की आत्मा को बचाए हुए शैतानी हवाओं से पेड़

नब्बे के शून्य (फुटनोट- कवि के पहले संग्रह "एक झील थी बर्फ़ की" में संकलित 'न्यूयार्क 90 और टेसा का होना न होना'।) पर रची गई कविता
फिल्म बनी शून्य से शुरू करने की (फुटनोट - अशोक विश्वनाथन की बांग्ला फिल्म 'शून्य थेके शुरु')
शून्य पर दोनों टांगें रख धकेल रहा
खुद को कलकत्ता

1994
हंस - 1996

2

बाज़ार है अब वहाँ नशीले पदार्थों का
सुनो, हमने वहाँ देखी थी हरी घास
अनंत
वहीं फुटबॉल खेलते हुए गोलपोस्ट के पास रखा
मेरा कड़ा (फुटनोट - सिख धर्म की परंपरा में कड़ा एक अनिवार्य परिधान है) खो गया था
याद है क्योंकि वह अंतिम कड़ा था
सहिष्णुता लौटी पर कड़ा नहीं
शहर में लौटी आत्मा पर मदहोश ज़रा नहीं

कैसा समय है नहीं पता मुझे मैं क्या चाहता हूँ
हरी घास, ऐंग्लो इंडियन लड़कियाँ, शहर में आत्मा या
ख़ुदगर्ज़ आलस

1994

3

घर में पड़ी हैं कैशोर्य की कविताएँ
काल्पनिक प्रेमिका का नाम
तीखी नाराज़गी
बाहर दोस्त हैं उनके पिताओं जैसे
अपनी या अपनी बहनों की शादियों के बारे में सोचते हुए
घर-घर शाम खरीदी है दूरदर्शन ने
कविताओं में तलाश रहा हूँ शहर को मैं

कविताएँ
साथी कवियों, शहर की ओर से बोल रहा हूँ
रोज़ की दौड़भाग में पैरों के पास छूटे हुओं के लिए
बेचैनी काफी नहीं
शहर के कवियों, हमेशा लड़ेंगे हम हारी हुई फौजों के साथ
जीतेंगे आखिर।
शब्दों को गढ़ना शहर का सपना चिरंतन

1994

4

खाली है वह मकान
वहाँ शाम होने से पहले आसमान होता था रक्ताभ
बरामदे पर खड़ी होती थी वह
पश्चिमा

खाली है
जाने कब वहाँ से आई थीं कवि की प्रेमोक्तियाँ
वक्ष चुंबन और ऐसी ही बातें
फोटोग्राफ

वह अब घर बसा रही है
उसकी बच्ची बढ़ रही है
उससे भी प्रबल प्रेमिका होगी वह एक दिन

लौटने पर मुहल्ले में सबसे अधिक खाली दिख़ता है
वह बरामदा
फिर खालीपन बिखरता है पेड़ों पर
ज़मीं आस्मां पर
सौंदर्य-शास्त्र और आधुनिकता की किताबों पर
बहुत बूढ़ा दिख़ता है शहर तब

1994
हंस - 1996

जिस दिन एल. ए. में दंगे हुए

यीशू!
दौड़ती साइकिल बँधा कुत्ता
चिढ़ है, मुझे चिढ़ है बच्चों से
कोई कह रहा था बार-बार चीनी रेस्तरां में

बँधे दौड़ते कुत्तों को देख
सड़क पार करते औरत ने कहा - जीसस!

एक और बेघर जला था
पिछली सुबह सब वे ट्रेन में
खबर थी इस बार कोई पकड़ा गया

किसी का संदेशा था
युवा वैज्ञानिकों के कंप्यूटर नेटवर्क पर
नहीं और नहीं सही जाती यह बेकारी

उस दिन दूरदर्शन पर थे
बीमार चेहरे जिन पर
अब कविताएँ नहीं लिखी जातीं
जिनकी चिकित्सा का बीमा कोई नहीं भरता

ऐसी कई बातें उस दिन हुईं थीं
जिस दिन लॉस एंजिल्स में दंगा हुआ

शाम अँधेरे कमरे में उसे याद आया
कलकत्ता
बदन पर दौड़ रही थी
माँ के बगलों से चूँते पसीने की महक

लेटे लेटे उसे अब सोचना था
शायद कल इस शहर में भी फसाद हो

शहर की वह शाम हल्की ठंडी-सी थी

1992
जनसत्ता - 1992

बच्चों से

तुम्हें देखकर मैं बनना चाहता हूँ
वह सब जो तुम बन सकते हो

लंबी चौड़ी सड़कों पर
जगमगाती मशालों-सी
खुले बालों-सी हवा में उड़ती
एक शांतिपूर्ण जग की शांत गाड़ियों में
सुखी तुम मैं बनना चाहता हूँ

खेतों की हरियाली में
पहाड़ों पर
जंगलों में तालाबों में
विवस्त्र कूदते तुम मैं बनना चाहता हूँ

औज़ारों को मोड़ चाँदनी की ओर
खुली पाठशालाएँ खुले अस्पताल
संगीत महल बनाते तुम
मैं बनना चाहता हूँ

पुस्तकें देश विदेश की आँखों में ढाल
लिख़ते पढ़ते ज्ञान शिखर पर नाचते तुम
मैं बनना चाहता हूँ

तुम्हारी कमज़ोर बाँहों में
देखकर अपनी चाहें डरता हूँ
फिर भी बनना चाहता हूँ
तुम जो कुछ बन सकते हो

1988
वसुधा - 1989

स्केच (?)

एक इंसान रो रहा है
औरत है
लेटर बॉक्स पर
दोनों हाथों पर सिर टिकाए
बिलख रही है
टेढ़ी काया की निचली ओर
दिखता है स्तनों का उभार
औरत है
औरत है
दिखता है स्तनों का उभार
टेढ़ी काया की निचली ओर
बिलख रही है
दोनों हाथों पर सिर टिकाए
लेटर बॉक्स पर
औरत है
एक इंसान रो रहा है

1992
पश्यंति - 1995

फ़ातिमा

बरसों बाद माँ के साथ गया वहाँ तो
याद आया एक औरत थी सुरैया
उसकी बेटी फ़ातिमा
वह थी जंगली गुलाब
इधर-उधर कहीं भी बैठ जाता हगने-मूतने
प्यार से वह उठाती
डाँटती प्यार से माँ को बुला लाती

बरसों बाद माँ के साथ गया वहाँ तो जाना
उसकी शादी हो गई
वह पाकिस्तान चली गई
दोस्तों! मैं एक मुसलमान औरत
बात कर रहा हूँ
जो चली गई पाकिस्तान

मेरी समृति में एक बहुत सुंदर औरत
अब तो वह ज़रूर पाकिस्तान के जीतने पर
पटाखे...

1994
पश्यंति - 1995

सूरज सोच सकने को लेकर

सूरज सोच सकने को लेकर
मैंने पहले भी कभी लिखा है
इन दिनों लड़ता हूँ इस शक से कि
सूरज सोचना शायद धीरे-धीरे
असंभव होता जा रहा है

सूरज सोच सकने के पूर्ववर्ती क्षणों में
वह बूढ़ा भर लेगा उस सभी जगहों को
अपने बच्चे की राख से
जहाँ मेरे पैर हैं
फिलहाल उसे सूरज नहीं सिर्फ एक रुपया
चाहिए या महज कुछ पैसे

मुझे लगता है मैं अभी भी
सूरज सोच सकता हूँ
शक है उस बूढ़े का असंभव ही हो
सूरज सोच सकना

1994
पश्यंति-1995

उस लड़की से

उस लड़की से मैं क्या कहूँ
साल भर पहले चिढ़ थी उसके मेकअप से
उस दिन आई
सादे लिबास सादी त्वचा
पूछा - आपके साथ भी होता है ऐसा?
छल, धोखा...
सोचा आपने कभी अध्यात्म पर...?

उस लड़की से मैं क्या कहूँ
चालीस के ऊपर हैं जो
आप बतलाइए मैं क्या कहूँ
चालीस के नीचे हैं जो
आप बतलाइए मैं क्या कहूँ
जो चालीस हैं
आप बतलाइए मैं क्या कहूँ
चालीस का हूँ
सन् उन्नीस सौ पंचानबे में यही
सोच सकता हूँ उस लड़की को
रुटीन-सी बातें कहते हुए

इसी बीच वह उठती है
अचानक कहती है श्रद्धा भाव से
बहुत समय लिया आपका - धन्यवाद

अगस्त 1995

आओ, पर्चे बाँटें

आओ, पर्चे बाँटें
उन कविताओं के
जिन्हें न जाने कब से हमने नहीं लिखा
उन सभी ख़तरनाक कविताओं के
पर्चे बाँटें
जिनमें हैं सभी प्रतिबंधित शब्द
हैं जिनमें कोलाहल
है प्यार

जून -1995

आ, शब्द

प्रचंड, ब्रह्माण्ड अखंड
खंड-खंड अखंड
विशाल प्रति खंड
खंडित कण-कण प्रचंड

तो कैसे शुरू करें?
जड़ जब जीवन
अनुचित की पराकाष्ठा से अचंभित मन
देख़ता दिगंत तक
अवसाद अखंड
फिर भी खंडित
सूक्ष्म से विशाल अँधेरे का हर कण

आ, कल्पना समुद्र से आ
मूर्त्त मेरे बदन पर
आ कविता, आ मेरे मसीहे की साँस
आ कि लगे झटका सृष्टि को
सृष्टि के हर सिद्धांत को
हर अंधकार को
आ, शब्द आ

अगस्त - 1995
साक्षात्कार - 1995

सपने में

सपने में देखा
एक शिकारी मानव सेमिनार-सभा में
यूँ आया अन्दर जैसे वहाँ लोग नहीं/पत्थर हैं
टापता चेहरा दर चेहरा वह आया

वक़्ता ने अचानक उत्तेजित हो मेज़ पर हाथ मारा है
चौंक कर ढूँढ़ता है वह ध्वनि का स्रोत
उसके शरीर में शुरू हुई हैं प्रक्रियाएँ
अंजान बातों से भिड़ने के लिए जो अभी
कुछ ही देर में हो सकती हैं

सपने में परेशान है वह
उसके पास नहीं कोई पत्थर या लकड़ी का औज़ार
सपने में उसके पास नहीं है आवाज़
जिससे वह ललकार सके पेड़ों, झाड़ियों, हवा या
मिट्‌टी से आती आवाज़ों को
थका बैठता है शिकारी मानव खाली कुर्सी पर
देखता है मंच पर बोलते वक़्ता को
बहुत देर तक सोचता है कहाँ उसने देखी है ऐसी गर्दन
ऐसा रंगीन चमड़ा
सोचता है थकता है और सो जाता है

सपने में सोया है शिकारी मानव

मई - 1995
पहल - 1995

वह प्यार

वह प्यार

1
महाविश्व में हर प्राणी को वह प्यार मिले
निर्जीव भी उस उन्माद में चीखें
सड़कों पर सोए हर बेघर को रात की परियाँ
उस तरह चूमें

मुझे मिला जो प्यार उसमें
फूलों के खिलने का जादू है
एक अनगढ़ युवा लड़की को क्रांतिकारी बना दे जो
स्वयं खिलना है वह एक जादुई फूल का

प्यार की उँगलियाँ शून्य में उठती हैं
पंखुड़ियों सी
विलीन होता हूँ मैं लंबी छलाँगे मारता
ऋतुओं के पार

जहाँ स्कूलों में बच्चे लुका-छिपी खेलते हैं
शिक्षक सुनाते हैं पंचतंत्र की कहानियाँ
जहाँ आषाढ़ का एक दिन गरजता आता है
बरसता है मेघदूत क्लास की खिड़कियों से

1992
साक्षात्कार -1994

2
उसकी शैतान आँखों में एक छोटा बच्चा है
घबराकर देखता हूँ
वह कहती है बहुत बच्चे हो तुम
उस वक़्त पृथ्वी ने सूरज को कही होती है
और भी नीला एक आसमान ढूँढ़ने की बात
हँस रहा होता पृथ्वी पर हर शिशु
लामबँद इलाकों में भी प्रसन्न होती है माँएँ
सांद्र गाढ़ा प्रेम उफनता है होंठों पर
हम चूमते हैं एक-दूसरे को चूमते हैं

1993
साक्षात्कार - 1994

3

अख़बारों में लिखी हैं बहुत-बुरी बातें
लिखी हैं सबसे सुंदर पतंगों की कटने की
ख़बरें
और तुम उदास हो
तुम्हारी उदासी में पढ़ता हूँ
अँधेरे में जीने का सच
अचानक छूती हो तुम मेरे होंठ
न जाने दुनिया के किस कोने से आया एक स्टैंप
उखाड़ता हूँ न जाने किसका थूक छूता हूँ
तुम्हारे मुझे छूते ही छू लेता हूँ दुनिया की कोई
रोती हुई जीभ
एक ख़त लिखा जाता है एक ख़त
पढ़ा जाता है...

1993
साक्षात्कार - 1994

4

एक बड़ा शहर हमारा इंतज़ार करता है
हम एक-दूसरे के हाथ थामे हुए हैं
हम आएँगे किसी बस से
थूक बलगम मक्खियों से बेफ़िक्र
बस अड्डे से निकलेंगे तैरते हुए
सोचेंगे ऑटो में जाने का खर्च कितना होगा
चाह कर भी नहीं जाएँगे ऑटो में
लोकल बस की भीड़ में तुम्हारी चिंता
होगी मुझे
चिढ़ता रहूँगा उन सब पर जो तुम्हारे
करीब होंगे
कहीं खाली सीट दिखते ही कहूँगा तुम बैठो
बाद में शहर खुशी से हँसेगा सड़कों पर
हमारी आँखों में प्यार का नशी ढूँढ़ेगा
शहर मस्त कलंदर

1993
साक्षात्कार - 1994

5
तुम्हारी पीठ पर से कुछ अणु
मेरी हस्त रेखाओं में बस गए हैं
जहाँ भी जाता हूँ
लोगों से हाथ मिलाता हूँ
उनके शरीर में कुछ तुम आ जाती हो
और वे सुंदर लगन लगते हैं अचानक
कम नहीं होती मुझमें तुम
जहाँ कहीं से भी लौटता हूँ
तुम होती हो हथेलियों पर
सड़कों से नाचते-नाचते लौटता हूँ घर
दरवाजा खोलते ही खिलखिलाता हँस
उठता है
दीवार पर पसरा भगत सिंह

1993
साक्षात्कार - 1994

6
तुम्हारी आँखों में एक निःशब्द रात है
मेरे होंठ उगते हैं अँधेरे में
गुब्बारा बन डूबता हूँ घने आसमान में
मेरी पीठ पर तैरती है चाँदनी की त्वचा
मैं सदियों की गहराई में जाता हूँ
चारों ओर उभरती है अनगिनत आवाज़ें
रंग-बदरंग चेहरे समय के अनजान गड्ढों से
निकलते
हर एक पुकारता तुम्हें
हर एक चाहता तुम्हें

1993
साक्षात्कार - 1994

7

ठहर जाता है विश्व एक बिंदु पर
जब तुम नहीं रहतीं

रह रह कर
नशे में उठ पड़ता हूँ
तुम्हारी बाँहें हवा में बहतीं
आ रहीं मेरी ओर

तुम्हारी जीभ तुम्हारे वक्ष
नितंब तुम्हारे मुड़-मुड़
आते हथेलियों पर

देख़ता हूँ अपनी
उँगलियों को
जैसे तुमने परखा था उन्हें

1986
एक झील थी बर्फ की - 1991

8

खिड़की के बाहर मोरछली का पेड़ मुर्झाने लगता है
जब तुम रूठ जाती हो
तुम्हारी आँखों से कहता हूँ मत रूठो
तुम्हारे होठों से चीख निकलती है
खिड़की पर बैठा है एक बंदर
हम दोनों खूब हँसते हैं खूब

1993
पश्यंती - 1995

9

प्यार में रोती तुम
चींटी-सी कमज़ोर होती हो
गीली सतह से उँगलियों पर उठाता हूँ तुम्हें
सुनाता हूँ कविताएँ
तुम्हारी आँखें तब आसमान बनने लगती हैं
उनमें उगती हैं पतंगें
खिलता चाँद उड़ते पक्षी
धीरे-धीरे टिमटिमाने लगते हैं ग्रह नक्षत्र
मेरे होंठ चूमते हैं
तुम्हारे आँसुओं के महाकाशयान
1993
पश्यंती - 1995

10
तुम्हारा न होना मेरा अपना न होना है
जीता हूँ सुख से फिर भी क्योंकि
ठंडी हवा है तुम्हारे होने की संभावना

आज तो एक चाँद भी है तुम-सा
सच कहता हूँ यह जो अँधेरा यहाँ से
चाँद तक फैला है
वह तुम्हारे बाल हैं

अँधेरे को उँगलियों में लपेटता हूँ बार-बार
जानता हूँ दूर किसी गाँव में
मुड़-मुड़ कर चूम रही होगी
मेरी उँगलियों को तुम

1993
पश्यंती - 1995

11
चिट्ठी तुम्हारी आई फुदकती फुदकती
ग़ौर से देखा लिफ़ाफ़ा
अक्षर तुम्हारे जो मेरा नाम थे उतावले-उतावले
ख़त को चूमा
फिर पढ़ीं ख़बरें
अख़बारों में नहीं आएँगी जो ख़बरें

1993
पश्यंती - 1995

12
उसने कहा अरे!
अरे क्या! मैंने कहा
फिर लिया लेखा-जोखा आपस में हमने
आपस के छूटे दिनों का

तुमने पिलाया पानी
मैंने सोचा बदन तुम्हारा कब छूटेगा
दिन भर के काम से

1993
पश्यंती - 1995

13
कोई किसी को इतना कैसे चाहता है
उसकी ओर बढ़ता हूँ
बढ़ता हूँ जैसे गर्भ से निकला माँ की ओर
उसकी छातियों पर माँ की आँखें हैं

उनमें यह कैसा समंदर
जितना डूबता हूँ
ज़िंदगी के करीब आता हूँ

1993
पश्यंती - 1995

14
आसमान में चाँद नहीं
तुम हो
ज़मीन पर
बिछी
नर्म हल्की ठण्ड
ओढ़ उसे
सुगबुगा रहा अँधेरा
मेरे अंदर

1993
पश्यंती - 1995

गुस्से में तुमने जो कहा

गुस्से में तुमने जो कहा
"क्या है जो तुम बिन हो नहीं सकता?"

सोचने लगा
क्या है सचमुच जो मुझ बिन नहीं हो सकता
उत्तर-पश्चिम हर ओर
बहुत बड़ी दुनिया घूम रही साल दर साल
सात सौ अस्सी लाख टन मीथेन आती
सामूहिक अँतड़ियों से कम न होगी मेरे न होने से
ब्रह्मदेव शर्मा कृष्णात्रे का जुलूस न रुकेगा
कोई प्रधानमंत्री न कहेगा बहुत हुआ अब और नहीं
बाबा का चरणामृत

सब कुछ जैसा है वैसा ही होगा
शिकायतें मेरी ढोएगा कोई चिंताएँ भी मेरी होंगी
किसी और पर
न बदलेंगे सुबहें, न शाम
ऐसी ही कविताएँ भी लिखेगा कोई

मेरे न होने से
वह तुम ही हो, जो तुम न होगी
तुम्हारी यह दुनिया
ये शिकवे, ये आँसू कभी-कभार
नहीं हो सकता यह जो मैं न होता

1989

तुम्हारा इंतज़ार

खिड़कियाँ धुंध रोके हुई थीं
बाहर गुनगुना रहा था शोर
लोगों की आँखों में
अनगिनत सतहों में छिपा
ख़ौफ़ शोर का

तुम्हारा इंतज़ार
उस वक़्त सबसे अधिक दर्दनाक था
घड़ी का काँटा मानो
सदियों बाद एक सेकण्ड हिल रहा
लोग एक कोने से आते-जाते रहे
हर बार तुम आने को होतीं
कोई और आया होता

पता नहीं किस सुख
किन तकलीफों को
तुमसे साझा करना था
कभी-कभी आती धूप की हल्की परत
थामे रखने की बहुत कोशिश की
सोचा तुम आओगी तुम्हें दूँगा
पर निगोड़ी धूप
इस उदास शहर में क्यों रुकती मेरे पास
तुम्हारा इंतज़ार एक ऐसा समय था
जैसे नीम बेहोशी में जीवंत दुनिया
होती है एक सपना
जिस बाद में बड़ी मुश्किल से
सोच-सोचकर तैयार करना पड़ता है
फिर सुन-सुनाकर जिसे
हम खूब हँसते हैं खूब

1990
वागर्थ - 1996

ती और टू

ती तुम !
टू तुम !
-शरत्
ठण्डी सुबह
कविता
हताशा के बवंडर में उगता जीवन सूरज
और तुम

ती जीवन तुम हो

-सपने सपने सपने सपने

-भीगी घास जैसे तुम्हारे

सीने पर बाल
टू जीवन तुम हो
-ती चलो उड़ें
थोड़ी देर
खोल दें मन के बंद किवाड़
खिलने दें
धमनियों में चाह
आसमान में चूमें
-टू मुझे चूमो
मैं ज़मीन हूँ
ठोस ऊबड़-खाबड़
उड़ने का समय कहाँ ?
जो कुछ यहाँ है सो है
आसमान नहीं
दुःख है
सागर है दुःख का
जीवन है यह
चूमो मुझे

ती !
-टू !

1993
पश्यंती- 1995

जैसे खिलता है आसमान

जैसे खिलता है आसमान
सीने में उल्लास की चीत्कार भर दौड़ो
प्यार जब चाहिए तो
चोटी पर बाँहें फैला सरगम गाओ

हो सकता है साथ आ बैठे दढ़ियल रवींद्रनाथ
हू हू बह निकले गंगा
महादेवी की जाने किन कविताओं से

प्यार जब होना चाहिए तो
होंठों को स्तब्ध न रखो
जिन आँखों को छूना है
जीवन की तहें वहाँ फैलाओ
साँस सिसकियाँ आवाज़ें
जिस्म रूह कविताएँ
होंठों की बाँसुरी में बजाओ
बाँसुरी नहीं चिरंतन फरीद वह
ईसा का सपना है
खिलो जैसे खिलता है आसमान

1994
पश्यंती - 1995

वह सागर होंठों पर

वह जो हर शुक्रवार ट्रेन में आती
कहती शुक्रिया खुदा का कि शुक्रवार है
ख़तम हफ्ते की दौड़भाग
माईबाप भाईजान आपाजान बेघर मैं आगजली
ढूँढ़ी नौकरी बहुत
पूछते नाम हर दर्ख़्वास्त में
नाम मेरा नैंसी
फिर पूछते पता नहीं यही बस
इसलिए आप सबने आना दो आना दो पैसा दो पैसा...

वह जो क्यूबा से लौटी नारी केंद्र संचालक
क्या तो नाम था कितने अपनेपन से कहा था शुक्रिया
सभा में आने का
दिखलाई थी फिल्म क्यूबा पर और बेसुरा सही गाया था
मोराहान (फुटनोट क्यूबा की कवि नैंसी मोराहान) का गीत...
वह जो पुष्पा पूछा था जिसने साक्षरता आंदोलन के बारे में
कितनी बेचैन चाहती तुरंत लौटना देश शोधकार्य ख़तम होते ही
बड़ी-बड़ी आँखें थीं जिसकी...

और वह...जो...
और वह...

इन सबको देना था जो प्यार
वह सागर होंठों पर लिए आया हूँ
सिर्फ़ तुम्हारे लिए, तुम्हीं में देखा जो उनको बार-बार

1992
पल-प्रतिपल - 1992

साफ़बयानी

साफ़बयानी

फिल्मोत्सव में ब्लैक अमरीकन फ़िल्में
विश्व-कविता उत्सव में एर्नेस्तो कार्देनाल
अपना उत्सव-वियतनाम कम्युनिस्ट पार्टी चीफ
और साहिबाबाद में हाशमी चुप

इस तरह बातें कह देना कविता नहीं
इस तरह कही गई बातें हैं बेतुकी
ये बातें कोई सुबह नहीं शाम नहीं
इनमें है जो दुःख महज भावुकता है
ये तो सच्ची बातें हैं सच्ची कहानी
कोई गान नहीं है सपाटबयानी

फिर भी मैं ऐसे ही लिखूँगा
मैं किसी और तरीके से इसे लिखना नहीं चाहता
मैं साफ़बयानी करना चाहता हूँ

बचपन की भूखी रातें
नंगे पैरों गर्म सड़कों पर चलना
और आज अपमानों के ढेर
सभी अनुभव तुम्हारी इन हरकतों से
शब्दहीन हो गए कुछ समय के लिए

मैं साफ़बयानी करना चाहता हूँ
फिल्मोत्सव में ब्लैक अमरीकन फ़िल्में
विश्व-कविता उत्सव में एर्नेस्तो कार्देनाल
अपना उत्सव-वियतनाम में कम्युनिस्ट पार्टी चीफ
और साहिबाबाद में हाशमी चुप

1989
वसुधा - 1989

पाश की याद में

चूँकि एक फूल हो सकता है एक सपना
बारिश में भीगी दोपहर
वतन लौटकर गंदी मिट्टी पर भिनभिनाते मक्खियों को
देखने की इच्छा
या महज लेटे-लेटे एक और कविता सोच पाना
एक सपना हो सकता है

इसलिए समय-समय पर कुचले जाते हैं फूल
उनकी गोलियाँ दनदनाती आती हैं
मेघदूतों के एक-एक टपकते आँसू को चीरकर
वे बसाना चाहते हैं पृथ्वी पर
सूखी आँखों वाली प्रजातियाँ
और चौराहों पर घोषणा होती है निरंतर
ख़बरदार सिर मत उठाना
रेंगते चलो संभव है आसमान दिख़ते ही
फिर जन्म ले बैठे कोई कविता

वे मशीनों में अपने नकली दाँतों की हँसी बिखेरते आते हैं
सभ्य शालीन कपड़ों में लफ़्ज़ों को बाँध आते हैं
वे आते हैं कई-कई बार
काले-काले चश्मों से अपनी लाल आँखें ढके आते हैं
उनकी कोशिश होती है चप्पा-चप्पा ढूँढ़ने की
पेड़-पौधों, घास-फूस, हवा पानी में

जितना ख़तरनाक है हमारे लिए सपनों का मर जाना
उतना ही ख़तरनाक है उनके लिए फिर कविता का जन्म लेना

इसलिए जब कभी कविता खिल उठती है
उनकी नसें फुफकारती हैं काले नागों-सी
और बौखलाहट में वे जलाना चाहते हैं चाँदनी रातें
मिट्टी की महक हमें ढक लेती है
वे जश्न मनाते हैं इस भ्रम में मशगूल कि
एक इंसान नहीं वाकई उसके सपनों का कत्ल किया हो

सदियों बाद
कविता फैल चुकी होती है दूर-दूर
दिन में सूरज और रात में तारों में होती है कविता
खेतों खदानों में स्कूलों में
परिवार में संसार में

होती है कविता
असीं लड़ाँगे साथी असीं लड़ाँगे साथी

सितम्बर - 1994

इतवारी पत्रिका - 1997

एक दोपहर तीसरी मंज़िल

गर्म हवा के झोंके में थी एक भीड़
फैल रहा था शोर का गुब्बार
देखा नीचे चल रहा सड़क की मरम्मत का काम

धूप थी नंगे बदन थे
औरतों ने भी खोल रखे चोलियों के एकाध बटन थे
दो कामगारों में हो गई लड़ाई

एक के माथे से बह रहा था खून
अलग-अलग लोग थे दोनों को सँभाले हुए
जाने कैसी आसुरी ताकत से कभी एक कभी दूसरा

भाग-भाग जाता उठा लाता कुदाल
लोग झपटते छीन लेते
खून फैलता लोगों के बदन पसीने में

वातावरण में फैली थी माँओं बहनों के बलात्कारों की गूँज
वापस आना था कवि को खिड़की से मेज़ तक
पढ़ना था कविता में विचारधारा का विरोध

1994
समय चेतना - 1996

यह वह बनारस नहीं गिंसबर्ग

'हाउल' (फुटनोट ऐलेन गिंसबर्गः बीटनिक पीढ़ी के अमरीकी कवि, 'हाउल' (चीत्कार) उनकी लंबी कविता है। उन्होंने बनारस में काफी समय बिताया था।) की पीढ़ी नहीं गिंसबर्ग
परवर्ती पीढ़ी हमारी
नहीं मालूम जिसे क्यों कब
किसने लिखा कुछ पढ़कर सो कुछ लिखकर सो
देख रही बिकती बोटियाँ जिगर की
छह दो सात पाँच बोली न्यूयॉर्क-टोक्यो की

हाँ ऐलेन क्यों आए थे बनारस। यहाँ तो छूटा फॉर्टी सेकंड स्ट्रीट (फुटनोट - फॉर्टी सेकंड स्ट्रीटः न्यूयॉर्क शहर का यौन-व्यवसाय का प्रख्यात क्षेत्र) बहुत पीछे
कुत्तों ने किया हमेशा सड़कों पर संभोग यहाँ
हर सड़क रंग-बिरंगी नंगी रंभाएँ
बेच रहा ईश्वर खुराक आज़ादी के मसीहे की

आश्चर्य यही कि मलमूत्र छिपे फंतासी (फुटनोट- फंतासीः बीसवीं सदी के अंतिम दशक में हिन्दुस्तान में बिकने वाली अश्लील तस्वीरों की विवादास्पद पत्रिका, जिसका समर्थन कुछ अंग्रेज़ीदां विद्वानों ने किया, पर जनान्दोलनों न जिसका व्यापक विरोध किया।) तस्वीरों में
चीत्कार इस पीढ़ी की नहीं बनेगी लंबी कविता नहीं बजेंगे ढोल
यह वह बनारस नहीं बीटनिक बहुत बड़ा गड्ढा है। रेंग रहा कीड़ा जिसमें
नहीं किसी और ग्रह का
मेरा ही दिमाग़ है लिंग है हे भगवान

चली गोलियाँ छत्तीसगढ़ (फुटनोट - छत्तीसगढ़ः शंकर गुहानियोगी और उनके साथियों के 'संघर्ष और निर्माण' की विचारधारा के साथ ट्रेड-यूनियन आन्दोलन के प्रयोग के क्षेत्र।)
भाई मेरा भूमिगत मैं क्यों गड्ढे में फिर
पाखंडी पीढ़ी मेरी
जांघियों में खटमल-सी
भूखी बहुत भूखी
बनारस ले गए कहाँ तुम
जाएँ कहाँ हम छिपकर इन खाली-खाली तकदीरों से
इन नंगे राजाओं से
कहाँ वह औरत वह मोक्षदात्री
बहुत प्यार है उससे
चाहा मैंने भी विवस्त्र उसे हे सिद्धार्थ
भूखे मरते मजूर वह क्यों फैलाती जाँघें
कहते हैं कोई डर नहीं उसे एड्स
का बहुत दुःखी इस पीढ़ी का पीछे छूटा यह बीमार
कई शीशों के बीच खड़ा ढोता लाशें अनगिनत
उठो औरतों प्यार करो हमसे
बना दो दीवार बाँध की हमें
कहो गिंसबर्ग कहो हमें गाने को यह गीत
बनारस नहीं आवाज़ हमारी अंतिम कविता
इसलिए कहो।

1992

पल-प्रतिपल - 1992

तिलचट्टे की मौत

रसायन
रासायनिक विष
तड़पा
दौड़ा उछला कूदा
पंख फड़फड़ाए
टाँगें सिमेटते फैलाते
अचानक ही उलटा

जैसे कोई खिलौना
संतुलन खो मुँह के बल गिरा
मरा
तड़प-तड़प मरा
ऐसे मरा
जैसे मरता आदमी
आदमी या औरत
ज़हर पीकर

अगस्त - 1994
पहल, वागर्थ - 1996

शहर से बाहर

सोलह साल की कड़ी मेहनत की उड़ीसा के जंगलों में
बचपन का काना स्वाधीन मामा शहर से भागा
शांत स्वभाव आठवीं फेल
सत्तर का साल था कलकत्ता जल रहा स्वाधीन मामा
जब भूख का सताया खुदकुशी कर रहा

गुरचरण भाई चचेरा पंजाब के गाँव से
शांत स्वभाव पहुँचा कलकत्ता पचहत्तर की मायूसी में सिमटा
शहर विकराल
लौटा गाँव चार महीने बाद
दवा कीटनाशक पी मरा एक रात

तीन सौ बरस ढोता रहा अनगिनत कथाएँ शहर
जाने क्यों था मरना उनको शहर से बाहर

1986
उत्तर संवाद - 1995

भाषा

बहुत पहले एक शुभाकांक्षी ने कहा था यह नाम ठीक नहीं
उसकी तनाव भरी आँखों में चिंता थी हँसा था मैं

एक बड़े कवि ने कहा जब देखा मैंने नाम सोचा
इब्बार रब्बी की तरह कोई खेल है

नाम के साथ भाषा जुड़ी होती है
जैसे होती दाढ़ी के साथ

यह सब खुद नहीं जानते
लोग आ-आकर बतलाते हैं हमें

एक दिन खुद सोचने लगते हैं हम
अपने किस नाम की भाषा हिंदू है और किस की सिख

दस साल हुए वाकई डरता हूँ अपने नाम से
कैसे गाया था उसने ईश्वर अल्लाह तेरो नाम !

1992
समकालीन भारतीय साहित्य - 1994

यहाँ नहीं कहीं और: सात दिसंबर, 1992

1

कहना दोधी से कम न दे दूध नहीं जा सकती इंदौर
कर दूँगा फोन दफ्तर से मीरा को अनु को
तुम नहीं जा सकती इंदौर अब
मैसेज भेजा लक्ष्मी को मत करो चिंता
नहीं आएगी स्टेशन मरे हैं चार दिल्ली में कर्फ्यू भी है
एक पत्थर और समय अक्ष पर पत्थर गिरे गुम्बदों से
समय अक्ष बन रहा अविराम समूह पत्थरों का

2

सभी हिंदुओं को बधाई
सिखों, मुसलमानों, ईसाइयों, यहूदियों, दुनिया के
तमाम मजहबियों को बधाई
बधाई दे रहा विलुप्त होती जाति का बचा फूल
हँस रहा रो रहा अनपढ़ भूखा जंगली गँवार

3

पहली बार पतिता शादी जब की अब्राह्मण से
अब तो रही कहीं की नहीं तू तो राम विरोधी
कहेगी क्या फिर विसर्जन हो गंगा में ही
निकाल फ्रेम से उसे जो चिपकाई लेनिन की तस्वीर
मैंने
मैं कहता झूठा सूरज झूठा सूरज झूठा सूरज रोती तू
अब तू तो कहती रही गलत है झगड़ा लिखा दीवारों पर
निश्चित तू धर्मभ्रष्टा
ओ माँ !

4

परुषोत्तम !
सभी नहीं हिंदू यहाँ रो रही मेरी माँ आ बाहर आ
कुत्ता मरा पड़ा घर के बाहर पाँच दिनों से
ओवरसीयर नहीं देता शिकायत पुस्तिका
ला तू ही ला लिख दूँ सड़ती लाशें गली-गली
कुछ कर हे ईश्वर !

5
सड़ती लाशें गली-गली
नहीं यहाँ नहीं कहीं और
फिलहाल दुनिया की सबसे शांत धड़कन है यहाँ
फिलहाल

1992
जनसत्ता - 1992, परिवेश - 1993

बहुत मन करता है

फिर एक बार
दुनिया की सबसे ऊँची छत पर
खड़े हो
किसी को चूमूँ

तेज़ दौड़ती गाड़ी में
मनपसंद गीतों की कैसट चलाऊँ
कोलोराडो के पहाड़ी जंगलों में
किसी से झगड़ूँ
पहाड़ी झील में विवस्त्र कूदूँ

अमरीका तुम्हारे कंप्यूटर्स पर
कविताओं की लहरें बनाऊँ
सारी-सारी रात जैज़ में डूब जाऊँ
सरेआम बसंत की धूप सेंकती बिकनी पहनी
औरत की तस्वीर खींचू

दौड़ूँ खेलूँ नाचूँ
बल्डी मेरी स्क्रू ड्राइवर पीऊँ
पीट सीगर जोन बाएज फिर से फिर से सुनूँ

बहुत मन करता है
मुट्ठियों में समेट लूँ
ऐसी चीज़ों को जो करीब थी
मन नहीं करता
सोचूँ वह सब
जो निकारागुआ है
दक्षिण अफ्रीका है
अमृतसर है
शहरों में मज़दूर और
खेतों में मजूर हैं
मन नहीं करता सोचूँ
वह सब जिनकी वजह से
भला वह सब जिन्हें पाने को
बहुत मन करता है

1987
पलत - 1989

हालाँकि लिखना था पेड़

हालाँकि लिखना था पेड़
पेड़ पर दिनों की बारिश की गंध
लिखा पसीना हवा में उड़ा सूक्ष्म-सूक्ष्म
लिखा पसीना जो अपनी सत्ता
देश से उधार लिए बहता दिमाग़ में
स्पष्ट कर दूँ यह कोई मजूर का नहीं
महज उस देश का पसीना
जिस पर तमाम बेईमानियों के ऊपर
मीठी सी हँसी का लबादा
हमारी एकता का हिस्स... ...
हमारी हें-हें हें समवेत हँसी का फिस्स... ...

हालाँकि लिखना था पेड़
पेड़ पर बंदर
आसपास थे घर और बंदर में घर
नहीं हो सकता
लिखा वीरानी जो चमड़े के भीतर बैठी
टुकड़े-टुकड़े
लिखा महाजन वरिष्ठ लिखा
राजन विशिष्ट मेरे इष्ट
जिन्हें इस बात का गुमान
कि पढ़े लिखों को
यूँ करते मेहरबान
जैसे नाले में कै लिखा कै के उपादान
पीलीया ग्रस्त देश के विधान

हालाँकि लिखना था पेड़
लिखी बातें लगीं संस्कृत असंस्कृत

1994
पश्यंति- 1995

लाल्टू

जन्म : 10 दिसंबर 1957

कृतियाँ : कविता संग्रह : एक झील थी बर्फ़ की (1990)।
कहानी संग्रह: घुघनी (1996)।
बच्चों के लिए कविता-संग्रह: भैया ज़िंदाबाद (1995)।

अनुवाद: लोग उड़ेंगे, नकलू नडलू बुरे फंसे। नवसाक्षरों के लिए नाटक और कविताओं की पुस्तकें प्रकाशित
विज्ञान शिक्षा, साक्षरता सहित कई जनांदोलनों में भागीदारी। हॉवर्ड ज़िन रचित 'संयुक्त राज्य अमरीका का जन-इतिहास' के बारह अध्यायों के अनुवाद के लिए चर्चित।

पत्रकारिता और पुस्तक-समीक्षा आदि लिखने में भी सक्रिय।

संपर्क:

T II 45
सेक्टर 25
पंजाब विश्वविद्यालय
चंडीगढ़ - 160014